…ना है नहिं राज है नहिं राव नहिं धन धाम है ।
…श भक्ती धर्म बाकी राख है औ चाम है ॥

प्रतापसिंह का प्रताप

लेखक—
शङ्करशरण

प्रतापसिंह का प्रताप

लेखक—

श्रीयुत शंकरशरण जी

सआदतगंज, लखनऊ ।

प्रकाशक—

महाशय श्यामलाल वर्म्मा

आर्य्य बुकसेलर, बरेली ।

द्वितीयबार ४०००] सन् १९२० ई० [मूल्य ।-)

Printed by C. M. Dayal at the Anglo-Arabic Press,
Mall Road, Lucknow.

निवेदन

प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रतापसिंह का जीवन-चरित्र प्रत्येक भारत सन्तान के लिये वीरता, धर्म्म, मान और स्वदेश प्रेम का आदर्श है । आत्मगौरव से हीन होकर जीना अति निन्दनीय है । अपने धर्म्म, मान और गौरव की रक्षा करने के लिये किस प्रकार कष्टों का सहन किया जाता है, इसकी शिक्षा हमें प्रतापसिंह के जीवन से भली प्रकार मिलती है । प्रताप के चरित्र को अनेक लेखकों ने अनेक रूप से लिखा है, फिर भी उनके पाठ से पाठकों की तृप्ति नहीं होती । आज कल इस नए प्रकार की कविता की ओर पाठकों की रुचि अधिक देख कर उसी कविता द्वारा इस पवित्र जीवन को प्यारे पाठकों की सेवा में उपस्थित किया था ।

प्रथम बार इस पुस्तक में प्रतापसिंह का पूर्ण चरित्र नहीं लिखा था तौ भी मेरे परम प्यारे पाठकों ने इसे बड़े आदर से अपना के मेरा उत्साह बढ़ाया । द्वितीय बार पूर्ण चरित्र मैंने कविता में कर दिया । आशा है प्रिय पाठक अब और भी अपनायेंगे ।

जिसने प्रताप के प्रताप का पढ़ा कभी इतिहास नहीं ।
वह हिन्दू अपना महत्त्व गौरव भी सकता जान कहीं ॥

शङ्करशरण

प्रतापसिंह का प्रताप

ईश्वर-प्रार्थना

संसार भर की शक्ति अपनी खड्ग से जो तोलते ।
वे वीर रण बाजे बजा जिसकी सदा जय बोलते ॥
शिव महादेव महाँ प्रभू की पार महिमा का नहीं ।
मेरे हृदय मठ में विराजें मूर्ति हो उनकी कहीं ॥

(१)

रण जीत सोलापूर से नृप मानसिंह गये वहाँ ।
राणा प्रताप स्वतन्त्र अपना राज्य करते थे जहाँ ॥
सुत अमरसिंह प्रताप का आकर मिला नृप मान से ।
लाकर टिकाया दिव्य घर में मान को सम्मान से ॥

(२)

थार भोजन का सुसज लाया कुँवर हित मान के ।
पर मान समझे हो रहे हैं ढङ्ग मम अपिमान के ॥
कहने लगे हे राजपुत्र पिता तुम्हारे हैं कहाँ ।
भोजन अकेला क्या करूँ उनको बुला लाओ यहाँ ॥

(३)

बोला कुँवर की है पिता के शीश में अति वेदना।
इससे बुलाने को उन्हों ने है किया मुझ से मना॥
पर मान कहते हैं कुँवर शिर दर्द राणा के नहीं।
हो व्यर्थ बहलाते मुझे मैं हूँ भटक सकता कहीं॥

(४)

उन से कहो शिर दर्द का कारण मुझे सब ज्ञात है।
नहिं खायँगे मम साथ वे अति खेद की यह बात है॥
भ्रम का उपाय कहाँ, वही मम साथ खायेंगे नहीं।
बतलाइये कब गैर मेरे साथ खायेंगे कहीं॥

(५)

और भी कितने बहाने किये राणा ने तथा।
किन्तु सबको मान समझे व्यर्थ ही है सर्वथा॥
दूर होता है नहीं सन्देह मन से मान के।
मान ने अपिमान क्यों अपना कराया जान के॥

(६)

था ज्ञात वीर प्रताप का मुझ से विरुद्ध विचार है।
तो जानते यह भी हमें जाना वहाँ बेकार है॥
जब प्रताप समझ गये चलते बहाने हैं नहीं।
तब साफ़ कहलाया नई यह रीति हो सकती कहीं॥

(७)

बप्पा रावल सूर्यवंशी की बनें सन्तान हम।
और अपने पूर्व गौरव का न रक्खें ध्यान हम॥
सम्बन्ध तुर्कों से करें फिर साथ दें हर बात में।
वे राजसुत खाना चहें आकर हमारे साथ में॥

(८)

हम नहीं विपरीत ऐसी कर सकेंगे जान के।
बान सम ऐसे वचन बेधे हृदय में मान के॥
त्याग के भोजन त्वरा चढ़ अश्व पर चलते भये।
होनी विवस राणा प्रताप उसी समय में आ गये॥

(९)

कर नैन तिरछे मान बोला भूल मत जाना कहीं।
मेवाड़ में तुम को मिलेगा ठौर रहने को नहीं॥
मैं नहीं नृप मान तोड़ूँ आपका नहिं मान जो।
भंग कर दूँगा बढ़ा तुम को महा अभिमान जो॥

(१०

घृणा युक्त प्रताप ने उत्तर दिया की हाँ सही।
मैं हुआ संतुष्ट ये जो आपने बातें कही॥
होगी खुशी जब आप को सन्मुख समर में पायेंगे।
बस तब हमारे आपके हृद क्षोभ सब मिट जायेंगे॥

(११)

मानसिंह चले गये क्या कार्य राणा ने किया।
बैठे जहाँ थे मान जल से भूमि वह धुलवा दिया॥
और शीघ्र स्नान कर पोशाक अपनी ली बदल।
यह खबर सम्राट अकबर के निकट पहुँची सकल॥

(१२)

वह मान के अपमान को अपमान अपना जान के।
क्रोधाग्नि में हृद जल उठा कहने लगा भौं तान के॥
क्यों क्या प्रताप अवश्य ही अपना भला चहता नहीं।
मेरे विरुद्ध विचार कर वह ठौर पावेगा कहीं॥

(१३)

मान से बोले हमारा हुक्म है यह आप को ।
नीचा दिखाओ जिस तरह चाहो तुरन्त प्रताप को ॥
फौज को दी आज्ञा फिर देर ही क्या थी वहाँ ।
फौजें इकट्ठा हो गईं थी आज्ञा सब को जहाँ ॥

(१४)

सम्राट पुत्र सलीम, मान अहो महाबत खाँ बली ।
इन तीन के हो साथ भारी फौज राणा पर चली ॥
कुछ भील औ बाइस सहस्र स्वदेश प्रेमी क्षात्र लो ।
निज ओर से राणा प्रताप सँवार के सेना चले ॥

(१५)

क्षत्रिय करोड़ों थे मगर लड़ने न आये लाख भी ।
पर डींग कोरी मारने को दौड़ते हैं आज भी ॥
जीवनाहुति लिये क्षत्रिय वीर राणा के खड़े ।
बाजे बजाते तुर्क टीड़ी दल वहाँ पर आ पड़े ॥

(१६)

यवनार्यों का हल्दी घाटी पर लगा होने समर ।
तिसमें विचारे भील भी लड़ने लगे कसके कमर ॥
प्रिय भील लोगों की पढ़ोगे वीरता आगे अभी ।
है पाप जो अहसान इनका क्षात्र नष्ट जायें कभी ॥

(१७)

यदि देश भर के क्षात्र होके एक मत लड़ते कहीं ।
कोई किसी भी काल में इन से विजै पाता नहीं ॥
हल्दी घाटी को रणस्थल कर समर करने लगे ।
सब वेग से रण पेंच कर कर मारने मरने लगे ॥

(१८)

चलते सनासन तीर तलवारें सनासन चल रहीं।
थी गोलियों की तड़तड़ी में बात सुन पड़ती नहीं ॥
हैं गोलियाँ ले ले हृदय में खड्ग बढ़ बढ़ मारते ।
ये कौन, क्षत्रिय भील तिल भर पग न पीछे टारते ॥

(१९)

चौकड़ी भूले मुग़ल गण हो गये कम्पित हिये ।
सब कह रहे अब क्या करें इन बरतैयों के लिये ॥
मर मार के ही छोड़ते जिस ओर घुस जाते सकल ।
हाँ क्यों नहीं ये लोग अपनी बात रक्खेंगे अटल ॥

(२०)

अश्व चेटक को नचाते शत्रुओं के शीश पर ।
नृप मान का राणा प्रताप जहाँ रहे थे खोज कर ॥
खूब चल रही जिनकी सनासन घूमती तलवार थी ।
जो भाँति ओलों के शिरों की कर रही बौछार थी ॥

(२१)

सम्राट पुत्र सलीम के गज पर किया जा आक्रमण ।
चेटक खड़ा ही हो गया गज सूँड़ पर रख के चरण ॥
था एक ही भाला हना कर क्रोध वीर प्रताप ने ।
हाँथी भगा सम्राट सुत थर थर लगा था काँपने ॥

(२२)

और हाँथी का महावत मरगया आया मरण ।
भयभीत सारे तुर्क हैं यह देख इनका आक्रमण ॥
थे प्राण तो ले ही लिये पै भाग्य वश जीता रहा ।
फिर भागते ही भागते यह शाहज़ादे ने कहा ॥

(२३)

जो शख्स शीघ्र प्रताप को लावे पकड़ या मार कर।
लेवे इनाम अमूल्य मेरा हार वोही वीर वर ॥
इस लोभ से लाखों मुग़ल दौड़े पकड़ने के लिये।
जैसे पतङ्ग प्रदीप पर धाये हों जरने के लिये ॥

(२४)

था कई बार प्रताप ने सब को विनाश भगा दिया।
तब तुर्क लोगों ने करों में प्राण अपने ले लिया ॥
लाखों हजारों के महाराणा निशाना हो गये।
बस क्या कहें सस्त्राश्त्र के मानों खज़ाना हो गये ॥

(२५)

झाला नगर नृप देश भक्त सुमित्र वीर प्रताप का।
था नाम मन्नासिंह राणा का न वह दुख सह सका ॥
धर्माभिमान महान क्षत्रिय जाति का खो जायगा।
मेवाड़ का रवि अस्त जो राणा कहीं हो जायगा ॥

(२६)

यह सोच मन्ना वीर ने तलवार पर निज दृष्टि कर।
राणा प्रताप फँसे जहाँ थे क्रोध कर आये उधर ॥
जा शीघ्र राणा को किसी विधि फौज में अपनी किया।
रवि छत्र उनका औ पताका ले लगा अपने लिया ॥

(२७)

सर्वाङ्ग राणा का छिदा धारें रुधिर की आ रहीं।
महराज मन्नासिंह बोले आप हट जायें कहीं ॥
कुछ सोच के ली रास्ता निज धाम की परताप ने।
अब आक्रमण सहसा किया जा तुर्क दल पर आप ने ॥

(२८)

राणा समझ धाये सहस्त्रों तुर्क इनको घेरने ।
थे काट भी डाले बहुत से शीघ्र मन्ना शेर ने ॥
क्यों, असंख्यों से अकेला जीत सकता है कहीं ।
तन सर्व श्रोणित से रँगा पै छोड़ते हिम्मत नहीं ॥

(२९)

रणधीर ने कर ही लिया जीवन सफल संग्राम में ।
वे धन्य जीवन दें स्वजाति स्वदेश के जो काम में ॥
हा वीर मन्नासिंह ने भी स्वर्ग का पथ ले लिया ।
औ डेढ़ सौ इनके सुवीरों ने वहाँ जीवन दिया ॥

(३०)

चौदा सहस्त्र स्वदेश प्रेमी उस दिवस जूझे वहाँ ।
लघु पुस्तिका में पूर्ण परिचय उनका मिल सकता कहाँ ॥
तौ भी तुम्हें मैं मुख्य वीरों को बताता हूँ तथा ।
सरवस्व ले जो देश हित तैय्यार ही थे सर्वथा ॥

(३१)

प्रथम राणा के सुसम्बन्धी निकट के पाँच सुत ।
पहुँचे अमरपुर वीर ये धारण किये शुभ वीर व्रत ॥
फिर धीर राजा रमशा युत पुत्र ग्वालड़े राय के ।
जूझा समर में शूर साढ़े तीन सौ को लाय के ॥

(३२)

इन वीर लोगों ने वहाँ वीरत्व जो दिखला दिया ।
जिसकी प्रशंसा शत्रुओं ने खुद समर में ही किया ॥
सब से अधिक अद्भुत दिखाई वीरता किस वीर ने ।
जिन जान राणा की बचाई शीघ्र मन्ना धीर ने ॥

(३३)

उस रोज का रणमौर मन्नासिंह के ही सिर रहा।
इस बात को मैं ने नहीं बहु लेखकों ने है कहा॥
अकबर कुमार सलीम रण को जीत रण से हट गया।
क्या कहें हा आर्य दल को वह वहाँ सब कट गया॥

(३४)

इतना बहा था खून जैसे रक्त सरिता थी भरी।
था ज्ञात होता ओढ़ ली रणभूमि ने रक्ताम्बरी॥
शस्त्र भी तिसमें चमकते थे सितारे से जड़े।
गिद्धादि लोथें वस्त्र जैसे बेल बूटे हों कढ़े॥

(३५)

भर गये नाले नदी रण रुक गया बरसात में।
है तुर्क सेना सब समय मेवाड़ पति की घात में॥
पा सुयोग प्रताप ने विश्राम कुछ ही दिन किया।
बरसात जाते ही यवन दल ढूढ़ने को चल दिया॥

(३६)

उस ओर राणा जा रहे मेवाड़ की थे बात में।
चुपचाप तुर्क सवार दो जिनकी लगे थे घात में॥
यह देख बन्धु प्रताप का घोड़ा भगा के चल दिया।
दोनो सवारों से हतन बन्दूक अपनी से किया॥

(३७)

सुन गोलियों का शब्द सहसा चौंक राणा जी पड़े।
फिर देखने पीछे लगे होके नदी के तट खड़े॥
क्या देखते हैं दो सवार गिरे पड़े जी जारहा।
एक निज घोड़ा भगाता शीघ्र सन्मुख आरहा॥

(३८)

तब प्रताप लगे सँभलने खड्ग अपनी खींच कर।
किन्तु वह आते गिरा मेवाड़ पति के पैर पर॥
रोता हुआ वह माँगने इनसे क्षमा पुनि पुनि लगा।
यह मनुज मेवाड़ पति का कौन था भाई सगा॥

(३९)

यह एक काल आखेट करने बन्धु दोनों बन गये।
पर अदिन वश बन्धु के यह शत्रु दोनों बन गये॥
क्यों, एक शूकर मार कर तकरार दोनों ने किया।
वह कहे मैंने बधा वह कहे मैंने बध किया॥

(४०)

शक्तिसिंह प्रताप से हो रुष्ट अकबर से मिला।
सौभाग्य वश यह प्रेम पङ्कज आज था इनका खिला॥
इस महाँ सुख में वहाँ भी शोक ने घेरा इन्हें।
अश्व चेतक काल के कर होगया तज कर इन्हें॥

(४१)

निज अश्व चेतक की रचाई कब्र राणा ने वहाँ।
है प्रसिद्ध चबूतरा वह आज चेतक का जहाँ॥
कुछ ही दिनों तक चैन से विश्राम राणा ने किया।
बरसात जाते ही यवन दल युद्ध करने चल दिया॥

(४२)

फिर फिर लड़े राणा परन्तु परास्त ही होते रहे।
धन जन तथा सरवस्व अपना नित्य ही खोते रहे॥
गृह त्याग करके कमल मीरस्थान को जा घर किया।
शीघ्र यवनों ने वहाँ भी घेर जा इनको लिया॥

(४३)

राणा जी के वास्ते था जिस कुवाँ से प्राप्त जल।
धूर्त तुर्कों ने दिया घुलवाय हा! उसमें गड़ल॥
अब महाराणा दुखी होने लगे बिन नीर के।
यवनाक्रमण से थे वहाँ पर भी न कुछ दिन रह सके॥

(४४)

यह दुर्ग तज कर चौंद नामक जो पहाड़ी दुर्ग था।
राणा वहाँ पर जा बसे पर सुख वहाँ पर भी न था॥
अति तङ्ग उनको तुर्क जा कर वहाँ भी करने लगे।
प्रण वीर के साथी दुखी हो कर पुनः लड़ने लगे॥

(४५)

एक यवन फरीद खाँ ने चौंद पर धावा किया।
सेना अधिक ले दुर्ग को जा घेर क्षण भर में लिया॥
किन्तु इसको पर्वतों में कैद राणा ने किया।
यहाँ तक प्रण वीर ने इसको कटक युत बध किया॥

(४६)

शनि गुरु अहो श्री भानुसिंह महाबली सरदार थे।
इस दुर्ग की रक्षार्थ ये सब तज गये संसार थे॥
इस कठोरोद्योग में इक भट्ट कवि भी हत हुआ।
अब महावत खाँ खुली है सिद्ध उसका मत हुआ॥

(४७)

सारे उदयपुर पर अभय अधिकार उसने कर लिया।
था आर्यों को कष्ट इसने भी भली विधि से दिया॥
हा उदयपुर को प्रताप चले भली विधि छोड़ के।
पर है चला जाता नहीं मुख मातृ भू से मोड़ के॥

(४८)

क्षण भर नहीं दी चैन इन को तुर्क लोगों ने कभी।
यह आक्रमण लेते रहे उनके सदा दुख मय सभी॥
पद दलित मेवाड़ मही को यवन दल हा! कर रहा।
जो सदा मेवाड़ राणा वंश के हीं कर रहा॥

(४९)

दैव गति कहते इसी से की कभी टलती नहीं।
हम तो कहेंगे कर्म अपना दैव की गलती नहीं॥
विविधि भाँति विलाप राणा कर रहे हो हो खड़े।
अब हो कहाँ भगवान! क्या मैंने किये पातक बड़े॥

(५०)

हाय क्यों सम्पत्ति पैतृक आज हम से लुट रही।
मातृ भू हा! आज यवनों के करों से लुट रही॥
हा! आज हम बन के अकिंचन जा रहे वनवास को।
हो भूल क्यों ऐसा गये भगवान अपने दास को॥

(५१)

रोते हुये राणा सहित परिवार कानन को गये।
यवनेश के अधिकार इनके सब किलों पर हो गये॥
जब जब जहाँ पर तुर्क दल ने घेर राणा को लिया।
तब तब वहाँ पर भील लोगों ने अधिक रक्षा किया॥

(५२)

परिवार राणा का टुकरियों में त्वरा बैठाय कर।
जाकर छिपाते थे बिचारे वृक्ष में लटकाय कर॥
प्रण वीर के वनवास की पढ़िये कथा आगे अभी।
नहीं क्षत्रिय वंश को जो भूल सकती है कभी॥

(५३)

शङ्कर शरण की काव्य क्या मोहित करे मन आपका ।
थी यह विषय की पूर्ति अब पढ़िये प्रताप प्रताप का ॥
है जागृत जीवन चरित्र प्रताप का ऐसा प्रबल ।
शिशु वृद्ध और युवक जिसे पढ़ि मोहि जाते हैं सकल ॥

(५४)

श्रावण सुहावन मास रजनी नभ घटा काली छई ।
हहरा रहे तरु देख पड़ती सब तरफ कज्जल मई ॥
रीछ व्याघ्र गुहों में निद्रा से भरे गुर्रा रहे ।
बाँबियों में सर्प ज्वाला गरल की फुर्रा रहे ॥

(५५)

गड़गड़ाते मेघ थे थीं तड़तड़ाती दामिनी ।
दामिनी के तेज में हो लुप्त जाती यामिनी ॥
दामिनी तू क्यों चमकती चमचमाती मेदनी ।
राणा को यवनों से बताने क्या चली बन भेदनी ॥

(५६)

यामिनी करती तिमिर करती प्रकाश को दामिनी ।
श्रावण में मदमथ खेल करतीं दामिनी औ यामिनी ॥
मेघ अपने में छिपाते क्या इसी से इन्दु को ।
हैं वृद्ध भारत के लिये चहते सुधा के बिन्दु को ॥

(५७)

शशि देव काले मेघ से मुँह खोल देते हैं कभी ।
पक्षी चकोर चिते रहे होते हैं वे हर्षित सभी ॥
नाना भयङ्कर शब्द उस वनखण्ड से हैं आ रहे ।
बेताल इत उत घूमते हैं अग्नि को भभका रहे ॥

(५८)

वन विकट घोर भयावना उल्लूक शोर मचा रहे।
शीत से अरु वारि से पक्षी शरीर बचा रहे॥
बोलें शृगाल समय समय झींगा उधर झनकारते।
आधी निशा का था समय नीरद प्रबल जल डारते॥

(५६)

इक शैल उत्तम गुफा में अति अन्धकार भरे हुए।
परतापसिंह मेवाड़ पति जिस भाँति दीन पड़े हुए॥
मेवाड़ महराणी पती के चरण बैठे दाबतीं।
टपटपाते आँसू अपने अधर दाँतों चाबतीं॥

(६०)

पुत्र पुत्री ढिग पड़े रानी उन्हीं को टेरतीं।
दुखिनी सी हाथ के कर अङ्ग भर पर फेरतीं॥
मखमली गद्दे बिछे थी सेज रत्नों से जड़ी।
आज उनकी सेज पृथ्वी पर बिछी है गिटकड़ी॥

(६१)

शोक सागर में पड़े परताप गोते खा रहे।
नाना तरह की सोचते हैं जीव को समझा रहे॥
हा ईश ! हा जगदम्ब ! मुख से बार बार उचारते।
होके अधीर किसी समय कर भूमि पै दे मारते॥

(६२)

जिन के भवन थे जगमगाते दीप के उजियार में।
विश्राम उनका हो रहा गिरि गुफा अन्धकार में॥
पौ फटा रजनी चली नभ छई रवि की लालिमा।
चक चकाने लग गये पक्षी तरुन की डालिमा॥

(६३)

सरितादि वेग बह रहीं गिरि से झरें झरने भले।
लहलहाते तरु हरे फल फूल से फूले फले॥
छाईं लता फूलों की शलों पै अनूप हरी हरी।
तरु हरे सुक बोलें हरे महि बिछी दूब हरी हरी॥

(६४)

रङ्ग बिरंगे मेघ भी क्या दीसते हैं चित्र से।
सूर्य्य भगवन् आ रहे हैं उदयचल पवित्र से॥
लघु वृक्ष नाना भाँति के रङ्गीन फूलों से भरे।
महि सोहते ऐसे गरे प्रकृती रचे गमले धरे॥

(६५)

उस हरी भू पै सहस्रों बारि कुण्ड भरे हुये।
मीन नाना भाँति के जल जीव आदि पड़े हुये॥
पर्वतों की चोटियाँ मानो लगीं आकाश में।
रङ्ग बिरंगे बादलों के पाग बाँधे माथ में॥

(६६)

रवि देव मद्धिम जोति से सुप्रकाश भू पर करि रहे।
निर्मल सरों में कमल सुन्दर विविधिविधि के खिल रहे॥
पशु पक्षियों के झुण्ड निज विश्राम से चलने लगे।
आनन्द से कानन सघन में दौड़ने फिरने लगे॥

(६७)

त्रिविध वायू डोलतीं तरु बाटिकों में लड़ रहे।
फैली सुगन्ध नवीन सुन्दर फूल भू पै झड़ रहे॥
हा! वे सुभग वनबाटिका परतापसिंह नरेश के।
अधिकार जिन पर होरहे हैं निर्दयी यवनेश के॥

(६८)

जानि प्रात प्रताप भी आये गुफा के द्वार में।
रानी सुता सुत को लिये हैं खड़ी गिरि की आड़ में॥
भूखे पियासे अङ्ग जिन के श्याम हो मुर्झा गये।
रोते हुए कन्या कुमर प्रताप के लिपटा गये॥

(६९)

ला वन फलों को भील ने रक्खे जु राना पास में।
धाये शिशू उनको उठाने अति क्षुधा की त्रास में॥
एक भील लम्बी स्वाँस लेता दौड़ता आता भया।
भागिये, चट भागिये! दल यवन का तट आ गया॥

(७०)

छोड़ के वन फल भगे वे बालकों को पकड़ कर।
इस भाँति से रक्षा करें राणा लिये परिवार भर॥
थी गुफा में कन्दरा सब को छिपाया जा वहीं।
वनवास में भी निर्दयी रहने उन्हें देते नहीं॥

(७१)

बरसात के जल में यवन करते कुपाकुप जा रहे।
"काफ़िर कहाँ काफ़िर कहाँ?" कह तेग को चमका रहे॥
हा! देश भक्त प्रताप के नयनों से नीर टपक रहा।
परिवार हित वे छिप रहे अन्तर से अङ्ग भभक रहा॥

(७२)

तृष्णा क्षुधा से बालकों की हो रही है दुर्दशा।
पड़े सब गिरि गुहा में मानो चढ़ा विष का नशा॥
जिन की गगन भेदी ध्वजा थी शत्रुओं के सालती।
शिर सहस्रों तेग जिनकी दामिनी सी घालती॥

(७३)

भेंट ले ले भूप जो आते रहे दरबार में।
आज उन को देख के होते खड़े वे आड़ में॥
देते सहस्रों को जो भोजन नित्य अपने हाथ से।
वे दुखी भोजन से फिरते विपिन मध्य अनाथ से॥

(७४)

सैन्य है नहिं शस्त्र हैं नहिं वस्त्र नहिं धन धाम है।
देश भक्ती धर्म्म बाकी हाड़ हैं औ चाम है॥
कन्दरा में कन्दरा थी भील सब को ले गया।
देख विह्वल बालको को घोर धरवाला भया॥

(७५)

इक शैल पै फिर ले गया गुहा की आड़ाआड़ में।
बालकों को जा छिपाया है घनी सी झाड़ में॥
बैठे जहाँ सब शोक में हैं धरे हाथ कपाल में।
राणा कहें–'विधि!' वाम होके क्या लिखा इस भाल में?

(७६)

म्लेच्छों की दास्यता करनी हमें क्या होयगी।
भारत मही गोरक्त ही से क्या कमल मुख धोयगी॥
सर्वस्व ले दुख दे रहे ईश्वर हमें स्वीकार है।
दास्यता यवनों की कर जीना हमें धिक्कार है॥

(७७)

प्रताप की दुखमय गिरा सुनकर सभी रोने लगे।
दुख देख जिन का वन के वनचर भी दुखी होने लगे॥
भील सब के हेतु लाया एक मृग को मार के।
सब के लगाए भाग भूँजे मास के आहार के॥

(७८)

खाते अलोने मास का ऐसे क्षुधा से हैं दुखी।
उस प्रेम से जैसे सुधा का पान कर होते सुखी॥
"दीन दीन" का शब्द फिर होने लगा है जोर से।
धावा किया यवनों ने फिर इक बार चारो ओर से॥

(७९)

उठ २ खड़े सब हो गये भोजन क्षुधा भर नहिं किया।
भागे बदाबद गोदियों में बालकों को ले लिया॥
सौ सौ गुहा राणा रहे कहिं वर्ष में कहिं मास में।
यवन भी दौड़ा किये कहिं दूर हैं कहिं पास में॥

(८०)

अपने कर्त्तव्यों से उन को कल यवन देते न थे।
प्रताप का विश्राम सुन विश्राम वे लेते न थे॥
परिवार ही राणा का राणा के लिये अब काल है।
सिंह राणा हैं फँसे परिवार मानों जाल है॥

(८१)

परिवार की रक्षा करें कुछ और कर सकते नहीं।
यदि और कुछ करते यवन परिवार को रखते नहीं॥
परिवार राणा का कभी थे तुर्क पाजाते कहीं।
मर्य्याद करते नष्ट उन के प्राण लौटाते नहीं॥

(८२)

राणा के सन्मुख आक्रमण यवनों के होते व्यर्थ हैं।
परताप इस आपत्ति के रक्षक भले सामर्थ हैं॥
यवनों ने घेरा दौड़ के प्रताप को जिस बार है।
परिवार की रक्षा भि की यवनों से की तलवार है॥

(८३)

सन्मुख हुए राणा जभी संग्राम तब डट के किया ।
काटे सहस्रों ही स्वयं निज अङ्ग नहिं छूने दिया ॥
सर्दार जो रजपूत सज्जन भील स्वामी भक्त थे ।
छोड़ा नहीं राणा को पै वे कष्ट से निःशक्त थे ॥

(८४)

अपने कष्टों को सदा थे सुख बराबर मानते ।
कष्ट स्वामी के वे अपना कष्ट कर थे जानते ॥
इक दिवस राणा ने एक दर्बार छोटा सा किया ।
सर्दार क्षत्रिय भील सब को गुहा में बुलवा लिया ॥

(८५)

सब आन बैठे शोक में अपने सिरों को नाय के ।
कहने लगे राणा गिरा नयनों से नीर बहाय के ॥
हे परम प्यारे भीलगण ! तुम ये हमारे ही लिये ।
कष्ट नाना सह रहे अरु प्राण भी बहु दे दिये ॥

(८६)

भ्रातृगण क्षत्रिय हमारे टीड़िदल से आवते ।
"हर हर महेश" उचारके थे शत्रुओं पर धावते ॥
खेत सा दल काटते थे मृत्यु से डरते न थे ।
आगे सदा बढ़ते थे पै पीछे चरण धरते न थे ॥

(८७)

हा ! जन्म भूमी हेतु वे संग्राम में सब सो गये ।
वे हमारे ही लिये अनमोल जीवन खो गये ॥
महराज, सौ सौ जन्म के वे पाप अपने धो गये ।
वे तपस्या योग ही बिन स्वर्गवासी हो गये ॥

(८८)

चिरकाल को वे वीरता का बीज भू पै बो गये ।
ऋषि कुल अगाने के लिये संग्राम में वे सो गये ॥
महराज, उनकी मृत्यु का कुछ शोक आप न कीजिये ।
वे भाग्यशाली वीर थे उन को प्रशंसा दीजिये ॥

(८९)

निज देश स्वामी धर्म्म सत् कामों में जो जाते हैं मर ।
है वास उनका स्वर्ग उनके नाम हैं जग में अमर ॥
महराज, मन धीरज धरो वे दिन कभी फिर आयँगे ।
क्षत्री भी 'हर हर' गायँगे औ शत्रुओं पर धायँगे ॥

(९०)

इस भाँति गण परताप के परताप से कहने लगे ।
प्रेम में राणा के आँसू नेत्र से बहने लगे ॥
आहा ! रहैया तुम कहाँ रमणीय राजस्थान के ।
भोजन थे करते स्वादु के और वस्त्र मन अनुमान के ॥

(९१)

हो साग भोजन कर दिवस भर कण्टकों में दौड़ते ।
स्वच्छन्दता की नींद एक स्थान में नहिं पौढ़ते ॥
मरु देश गिरि गिरि घूमते हो पड़िरही अति शीत है ।
सब जाव निज निज धाम को अब धर्म्म की विपरीत है ॥

(९२)

महराज पृथ्वीनाथ ! यह तो धर्म्म की शुभ नीति है ।
धर्म्म तीनों काल में करता नहीं विपरीत है ॥
हरिचन्द की धर्म्मज्ञता संसार में विख्यात है ।
सर्वस्व दे बेचा स्वयं को जा श्वपच के हाथ है ॥

(६३)

उनके धरम सङ्कट से पुस्तक एक पूरी है भरी।
सङ्कट सहे नाना प्रतिज्ञा धर्म्म की पूरी करी॥
करि अवध सम्राट उनको धर्म्म सुरपुर ले गया।
आदर्श जीवन-लेख उनका आर्य्य गण को दे गया॥

(६४)

धर्म्म दाता सैकड़ों ऐसे हुए इस देश में।
जगमगाते नाम जिन के स्वर्ण से हर लेख में॥
धर्म्म सेवा आप की कर हम प्रशंसा पायँगे।
मर जायँगे तो जायँगे जीते न तज के जायँगे॥

(६५)

सर्दार गण के सुन वचन हैं तो मुदित मेवाड़ पति।
शोक पर उनके हृदय का नहीं होता है विगत॥
कण्ठ गद्‌गद् होगया औ आँसु फिर बहने लगे।
भूपति उठा कर हाथ सरदारों को समझाने लगे॥

(६६)

है ठिकाना यह नहीं की कल कहाँ पर होयँगे।
यदि किये भोजन यहाँ तो कर कहाँ पर धोयँगे॥
भोजन सहस्रों को करा भोजन मैं करता था कहाँ।
कन्या कुँवर मेरे दुखी भोजन से होते हैं यहाँ॥

(६७)

दासता यवनों की हम स्वीकार कर लेते अभी।
हे बहादुर भाइयो! यह कष्ट नहिं पाते कभी?
हृदय विदारक हा शिला खण्डों पै रहते क्यों यहाँ।
राजते रत्नों जटित थे छत्र सिंहासन जहाँ॥

(९८)

मम शरण रहते थे अभिमानी नरेश बड़े बड़े ।
इन चरण पर धर मुकुट कर जोड़ थे रहते खड़े ॥
सामग्रियाँ संसार की जो की सुखद भण्डार थीं ।
हाथ जोड़े वह हमारे खड़ी रहतीं द्वार थीं ॥

(९९)

इन क्षणिक सुक्खों से तो हाँ मैं सुखी होता सही ।
भगिनी सुता यवनों को जो देना हमें पड़ता कहीं ॥
मर्य्याद में तो राख पड़ जाती न रहती क्षत्रता ।
पर हाँ यहाँ ऐसे भी हैं जिनका है देना ही मता ॥

(१००)

भगिनी सुता यवनों को दे चहता न अपना मान है ।
यह महा कानन मुझे मेवाड़ के हि समान है ॥
यह गुफा गिरिकन्दरा महलों से मेरे कम नहीं ।
वनफल महा भोजन, समझते हम इन्हें वनफल नहीं ॥

(१०१)

कोई समझता हो मुझे 'परतापसिंह गँवार है' ।
हूँ सही, पर दासता यवनों कि नहिं स्वीकार है ॥
आहा ! हमारा हृदय-मन्दिर ही पवित्र स्थान है ।
आर्य्य गौरव से भरा सर्वस्व जिस को ज्ञान है ॥

(१०२)

बाहरी शोभा इसे मोहें उन्हें शक्ती नहीं ।
जिह्वा चकोरों की कभी है अग्नि से जलती कहीं ॥
मानता हूँ इन दुखों को मैं महासुख प्रेम से ।
पूर्वजों की सुन कथा औ सूर्य्यवंशी नेम से ॥

(१०३)

इस से कहता हूँ कि क्यों तुम कष्ट भागी हो रहे ।
देश भक्ती में बँधे सब साधु त्यागी हो रहे ॥
जाइये सब सज्जनो अब त्यागिये मुझ दीन को ।
कर्म्म हीन मलीन को औ सर्व वस्तू हीन को ॥

(१०४)

मानी किसी ने एक नहिं राणा जी बैठे हार के ।
सर्दार यों कहने लगे तलवार भू पै डार के ॥
तीखी करी थी खड्ग हम ने शत्रुओं ही के लिये ।
महराज, इस को लीजिये अब हम सबों ही के लिये ॥

(१०५)

काट लीजै सिर हमारा भगवती को दीजिये ।
ऐसी हृदय बेधी गिरा दासों से पै नहिं कीजिये ॥
शत्रुओं के रक्त की प्यासी हैं खड्गें नाथ की ।
लपलपाती हैं लखो ज्यों जीभ दुर्गा मात की ॥

(१०६)

प्यास हम इन की बुझावेंगे खलों के रक्त से ।
वीरेन्द्र हो स्वामी वचन कहते हो क्यों, निःशक्त से ॥
स्वाधीनता अपनी सदा हम स्वर्ग ही सी मानते ।
हैं दास होना यौन का हम नरक ही सा जानते ॥

(१०७)

हैं सुखी हम, आप स्वामी दुखी कुछ नहिं हूजिये ।
कैसे पराजित हों यवन महराज ऐसी बूझिये ॥
हंस रूपी जीव इक दिन अङ्ग से उड़ जायगा ।
संग्राम में उड़ जायगा उत्तम प्रशंसा पायगा ॥

(१०८)

दासता यवनों की करने से अगर जीवित रहें।
दास होने के लिये अकबर से हम चलकर कहें॥
प्रण छोड़ कर जीना हमें संसार में धिक्कार है।
औ छोड़ कर तुम को हमें जाना नहीं स्वीकार है॥

(१०९)

मरना है इक दिन शत्रु को जय पत्र तुम देना नहीं।
हो मानिनी सन्सार में अपमान अब लेना नहीं॥
हम सब के सब चाहे रसातल को अभी जावें चले।
हे प्रभू! प्रण आपका जीवित हमारे नहिं टले॥

(११०)

हम बिधर्म्मी राज्य के अनुचर नहीं कहलायँगे।
है भला महराज, हम इस खड्ग से मर जायँगे॥
कायर कहो कैसे बनें ऋषि वन्श के हम वीर हैं।
है ज्ञान गीता का जिन्हें वे हुये कभी अधीर हैं॥

(१११)

आधीनता से बढ़ भला संसार में दुख कौन है?
आधीन करने के लिये हमको बिधर्म्मी यत्न है!
कायर हो क्षत्री वन्श में बट्टा लगावेंगे नहीं।
है जीव जबलों हाथ से तलवार गिर सकती कहीं॥

(११२)

जीवित रहेंगे तो रहें स्वाधीनता से हर्ष में।
जन्म भूमी धर्म्मदा में देश भारत वर्ष में॥
यदि मर गये रण भूमि में सुर धाम में तो जायँगे।
जीते हुए जय सूर्य्य वन्शी की सदा हम गायँगे॥

(११३)

स्वाधीनता मेरी प्रभू भी बेच सकते हैं नहीं ।
आप जा सन्धी करें हम रोक सकते हैं नहीं ॥
भील क्षत्री तो वहाँ जीते नहीं जाने के हैं ।
आधीन होके यौन के हम मुँह न दिखलाने के हैं ॥

(११४)

मरु भूमि के हम कणों में मिल जायँ तो मिल जायँगे ।
पर दास जब कहलायँ हिन्दू भूप के कहलायँगे ॥
सरदार क्षत्री भील सब के सब सदा कहते यहीं ।
फिर अवश राणा हृदय में प्रेम की सरिता बही ॥

(११५)

उत्तर यही था चाहता है धर्म वीरों धन्य हो ।
न्यायी हो स्वामी भक्त तुम सब वीरता सम्पन्न हो ॥
भगवान प्रण पूरण करें औ सिद्ध यह उत्थान हो ।
हो आर्य्य पूरे सज्जनो और वीर ऋषि सन्तान हो ॥

(११६)

तुम सरीखे साथ में हैं यदि हमारे वीर जन ।
स्वाधीनता को तो हमारी ले नहीं सकते यवन ॥
स्वाधीनता से बढ़ के कोई सुख नहीं संसार में ।
स्वाधीनता से फिर पधारेंगे कभी मेवाड़ में ॥

(११७)

इस लिये मिल के सभी अब यह प्रतिज्ञा कीजिये ।
स्वाँस जब लौं तन में तब लौं पग न पीछे दीजिये ॥
महराज ! हमने तो प्रतिज्ञा यह कभी छोड़ी नहीं ।
अपने कर्त्तव्यों से रण से मुख भला मोड़ा कहीं ॥

(११८)

खेत सा काटेंगे क्षण में शत्रुओं की सैन को ।
रक्त प्यावेंगे भवानी भारती सुखदैन को ॥
कह उठे इक बार सब राजन हमें स्वीकार है ।
साहस न छोड़ेंगे करों में जबतलक तलवार है ॥

(११९)

होती सभा में पुनः सैनिक दौड़ता आता भया ।
हाँफता कर जोड़ता राणा को शिर नाता गया ॥
हे अन्नदाता ! अति बड़ी सेना यवन की आ रही ।
है कोस भर पर देखिये गर्दा गगन में छा रही ॥

(१२०)

अनुचर-गिरा सुन, खड़े राणा हो गये तत्काल हैं ।
तमतमाया मुख अरुण हो, चक्षु जिन के लाल हैं ॥
कर में दुधारा नग्न ले राणा खड़े यमराज से ।
क्रोध में बोले डपट के सिंह की सी गाज से ॥

(१२१)

प्रताप की सुन आज्ञा धुधुकार नरसिंहा बजा ।
वीर गण आये जो करते काम लों उसको तजा ॥
सुन शब्द नरसिंहा का दौड़े भील तरकस तीर भर ।
क्षत्री भी आये वेग से तलवार कटि बाँध कर ॥

(१२२)

आये बिचारे वे भी जिनके शस्त्र कुछ नहिं पास थे ।
ले ले के डण्डे बाँस के वे वीर ऐसे दास थे ॥
करि पाँति सब हुए खड़े प्रताप को सिर नाय के ।
तीन सौ के तरपटक सब हैं इकट्ठा आय के ॥

(१२३)

राणा गे समझाने लगे दो भील पास बुलाय के।
वनिता शिशू इत्यादि ले जाओ छिपाओ जाय के ॥
काली घटा सी घेरती यवनों की सेना आ रही।
'दीन दीन' की टेर जिनकी विपिन भर में छा रही ॥

(१२४)

खड्ग ले राणा खड़े निज सैनिकों के पास में।
'शम्भु हर हर' शब्द जिनके छा रहे आकास में ॥
राणा ने भीलों से कहा—"गिरि से चलाओ तीर तुम"।
खड्ग बर्छा ले चलो नीचे को क्षत्री वीर तुम ॥

(१२५)

ले साथ क्षत्रिय-वीर राणा शैल के नीचे खड़े।
झमझमा के यवन भी राणा के सन्मुख आ पड़े ॥
कर शब्द 'हर हर' खड्ग ले क्षत्री भी टूटे बाज से।
यवनों में राणा घुस पड़े तलवार ले यमराज से ॥

(१२६)

आक्रमण यवनों ने भी आते किया इक बार से।
व्याकुल यवन पै हो गये भीलों के शर की मार से ॥
काटते क्षत्री यवन दल खेत ही सा वेग से।
'चल चल अरी चल ज़ोर से' कहते यवन यों तेग से ॥

(१२७)

राणा जिधर जाते उधर जैसे कि तृण में ज्वाल हैं।
तक तक के मारें भील शर, छेदें यवन के भाल हैं ॥
राणा को विह्वल देखते ही भील भी आये उतर।
इत उत खड़े राणा के हो करते चतुरता से समर ॥

(१२८)

साहस छुटाया क्षत्रियों ने यवन की बहु सैन का।
हो गये विस्मित यवन दल देखते लघु सैन का॥
तीन घण्टे लौं महा संग्राम ही सा हो गया।
लगभग अठारह सौ तुरुक रण भूमि में था सो गया॥

(१२९)

और जो कुछ रह गये दिल्ली गये रण छोड़ के।
मर गये क्षत्री समर से नहिं गये मुँह मोड़ के॥
लोथें बिछी हैं हो रही है कीच कचबच रक्त की।
कुछ अधमरे कल्पें दशा जिनकी महा आसक्त की॥

(१३०)

उड़ उड़ के कौवे गीध उन लोथों को खाते नोचते।
कोई रुधिर पीते कहीं पै स्यार मांस घसोटते॥
भील क्षत्री जो बचे आये वह राणा पास में।
चढ़ गये पर्वत पै राणा ले सबों को साथ में॥

(१३१)

इक इक को करि परतापसिंह भेंटे हृदय लपटाय के।
हर्षित हुये वे भील क्षत्री शीश अपने नाय के॥
बैठ के हैं पोंछते जो रक्त खड्गों में भरा।
है सबों का अङ्ग पूरा रक्त से डूबा पड़ा॥

(१३२)

ले चला इक भील सब को साथ अपने आय के।
जाय लेके सघन वन में सब चले हर्षाय के॥
टोकरों में बालके थे झूलते तरु डार में।
रानी अजम्बा आदि बैठीं महा सोच विचार में॥

(१३३)

राणा की तकते राह सब चक्षु लगाये बाट में।
उठ उठ खड़े हो देखते वन-वृक्ष की झर्राट में॥
रक्षक खड़े हो भील धारे हैं धनुष पै तीर को।
देखने यवनों को भी निज नाथ राणा वीर को॥

(१३४)

आ रहे राणा सबोंयुत, रक्त डूबे लाल हैं।
परिवार के तिन के सभी धाये हो आतुर हाल हैं॥
राणा उन्हें ऐसे मिले भगवान जैसे मिल गये।
परताप रूपी सूर्य पाके वे कमल से खिल गये॥

(१३५)

कन्या कुमर सब दौड़ नृप के अंग में लपटा गये।
राणा सभों को देखते आनन्द में अति छा गये॥
हँस हँस के राणा पूछते—'हे बालको, हर्षित रहे?'
'हाँ हाँ पिता, तव कृपा से हम सर्व आनन्दित रहे॥'

(१३६)

रानी अजब्बादे पड़ीं चरणों पती के आय के।
हर्षित भई जैसे कोई निर्धन महा धन पाय के॥
वीर राणा भी जा सरों में रक्त को धोने लगे।
अस्नान कर खा कन्द मूल आनन्द सब होने लगे॥

(१३७)

रानी अजब्बादे पती का अंग बैठे धो रहीं।
शस्त्रों छिदा तन देखतीं पीड़ित हृदय में रो रहीं॥
अस्नान हो राणा के भी भोजन हुए फलहार के।
राणा को बैठे घेर के राणा के जो परिवार के॥

(१३८)

रानी अमरसिंह पुत्र को बैठीं हैं ले के गोद में ।
संग्राम के घायल उन्हें सुहरावतीं आमोद में ॥
हे पुत्र ! पितु के साथ जा संग्राम पूरण किया था ?
यवन सिर इस खड्ग से, सुत काट तो खूब लिया था ?

(१३९)

चूमतीं मुख पुत्र का करि वीरता उपदेश है ।
वीरता सुत के हृदय में हो प्रगाढ़ प्रवेश है ॥
आज की माता सुनें सौ कोस पै संग्राम है ।
वीर सुत को पोच करना जानतीं शुभ काम है ॥

(१४०)

वीर चन्द्रावत विराजें पास में परताप के ।
उर में हिलोरे उठ रहे हैं शोक के सन्ताप के ॥
इस छावरे के वन में राणा बहुत दिन रहते रहे ।
नाना विपत्ती सब के सब निज अंग पै सहते रहे ॥

(१४१)

स्थान था रमणीय उत्तम त्रिविध वायू डोलतीं ।
लहलहाते वृक्ष जिन पर कोकिलादिक बोलतीं ॥
शिव योगियों की भाँति राणा शैल की चट्टान में ।
लेटे हुए रानी भी आ बैठीं उसी स्थान में ॥

(१४२)

अति उदास निहार पति का चित्त बहलाने लगीं ।
पग दाबती हैं बिहँसि अपने नाथ समझाने लगीं ॥
प्राण-पति आशा न छोड़ो याद करिये ईश को ।
मान अकबर का हरे जिसने बधा दशशीश को ॥

(१४३)

विपता दिवस वे ही कभी करके सुदृष्टी खोयँगे।
इन धर्म्म दुःखों के प्रभू परिणाम अच्छे होयँगे ॥
वह ईश न्यायाधीश है अन्याय करता है नहीं।
धार्म्मिकों अपने जनों की सम्पदा हरता नहीं ॥

(१४४)

अपयश सुयश संसार में कहने को हाँ रह जायगा।
पाण्डव जहाँ पर नहिं रहे अकबर कहाँ रह जायगा ॥
हे प्राणप्यारी ! क्या सुयश हमने किया संसार से।
जुझवा दिये क्षत्री सहस्रों यवन की तलवार से ॥

(१४५)

पिता जी ने खो दिया था एकली चित्तौर को।
हमने नहीं रहणे को रक्खा एक तिल भर ठौर को ॥
चित्तौड़ ही की आस में सर्वस्व मैंने खो दिया।
हे प्रिये ! आशा ने मेरी काँट मुझ को बो दिया ॥

(१४६)

जीत की आशा में पाण्डव सर्व सम्पति हर गये।
आशा की अग्नी में सहस्रों इस मही पर जर गये ॥
जीते पराई राज्य को आशा नृपत का धर्म्म है।
निज राज्य लेने को प्रभू जी आप को क्या शर्म्म है ॥

(१४७)

साहस न छोड़ो टेर दीनानाथ कर लेंगे श्रवण।
रमणीय उस मेवाड़ में फिर नाथ का होगा रमण ॥
क्षत्रियों ! उर क्षेत्र में बोई जो तुमने वीरता।
होगी उदय वह चक्षुओं के सामने रणधीरता ॥

(१४८)

उस बीज से स्वाधीनता का हो अक्षयवट जायगा।
शीतल सुखद छाया में भारतवर्ष को बैठायगा॥
हे प्राणपति! इतना दुखी होना तुम्हारा व्यर्थ है।
सहसी बनो पालन करो प्रभु प्रेम से निज वर्त्त है॥

(१४६)

प्यारी! बिसारूँ कौन विधि मैं हृदय बेधी दुःख को।
जूझे सहस्रों राजसुत लखते हमारे मुक्ख को॥
देश-हित वीरों ने अपने प्राण होमे जाय के।
मेरे लिये सब मरगये जीवन के सुक्ख भुलाय के॥

(१५०)

जीते हुए हम क्षत्रियों के हाय भारत लुट गया।
हस्तिनापुर जग-विदित स्थान हम से छुट गया॥
इन्द्रप्रस्थ में राज करते थे युधिष्टिर धर्म्म-सुत।
धर्म्म को थे पालते वे पाँच भ्राताओं सयुत॥

(१५१)

हा! महाराजा युधिष्टिर जहाँ के सम्राट थे।
वेद ध्वनि से गूँजते स्थान थे वन बाट थे॥
उस अजित भू के अधिष्टाता महात्मा आर्य्य थे।
भीषम पितामह भीम अर्जुन और द्रोणाचार्य्य थे॥

(१५२)

गौरव जिन्हों का आज भी संसार में विस्तार है।
कर्त्तव्य से जिन के, तुम्हारा आज भारत प्यार है॥
थीं गान्धारी द्रौपदी कुन्ती जहाँ सम्राज्ञनी।
जिनके पतिव्रत से हुई थी पावनी वह मेदनी॥

(१५३)

हस्तिनापुर मध्य में म्लेच्छों क हा ! अधिकार है ।
क्षत्रियों का जगत् में जीना महा धिक्कार है ॥
मम भुजा बल शून्य क्यों है ये हृदय क्यों क्षीण है ।
जीव मेरा वीर था अब क्यों शिथिल है दीन है ॥

(१५४)

आर्य्यों की नाथ ! लज्जा आप ही रख लीजिये ।
नील नभ मण्डल से हमको वेग उत्तर दीजिये ॥
दो बल भुजों में, शक्ति कर में, शस्त्र फिर से धार लें ।
माँगता हम से सुता ! जिह्वा यवन की काढ़ लें ॥

(१५५)

आर्य्य जाति सुनाम को हे नाथ ऊँचा कर सकूँ ।
शत्रुओं के अंग को शस्त्रों से अपने भर सकूँ ॥
प्रार्थना भगवान यह या तो मेरी सुन लीजिये ।
हो अगर रूठे, तो फिर मृत्यू हमें दे दीजिये ॥

(१५६)

प्राण पति ! हो वीर आप अधीर होते किस लिये ।
इस से बड़ा कल्याण क्या इत दृष्टि स्वामी कीजिये ॥
आपने सर्वस्व तन, मन, धन अगर अर्पण किया ।
निज मातृभूमी हेतु सेवा में समर्पण कर दिया ॥

(१५७)

स्वामी समर्पण आपका यह तो हुआ शुभ स्वार्थ है ।
हे प्राणपति ! सुज्ञान होके शोक करना व्यर्थ है ॥
स्वाधीनता कल्याण मन्दिर मध्य आप विराजते ।
हो दीन पै नृप से अधिक जो धर्म को नहिं त्यागते ॥

(१५८)

योगियों की भाँति बैठे आप भी वनखण्ड में।
हावती दासी चरण को आप के आनन्द में॥
शशि भानु पर पड़ते ग्रहण पै पूर्ण हो जाते सही।
आते सुदिन पै हैं अदिन पर फिर सुदिन आते सही॥

(१५६)

रात बीते पै दिवस बीतै, दिवस पै रात है।
संसार में इस भाँति दुख सुख मनुष्य पै विख्यात है॥
तरु पै अदिन आते तो झड़के ठुंड हो जाता है वह।
आते सुदिन नव पुष्प-पत्ती-युक्त हरियाता है वह॥

(१६०)

दिन अदिन संसार में सर्वत्र योंही घूमते।
दिन सुदिन आवेंगे जननी भूमि के भी घूमते॥
प्राणपति! धीरज धरो स्वामी स्वयं सुज्ञान हो।
दासी बतावै क्या सिखाते आप सबको ज्ञान हो॥

(१६१)

आप का मुख लखि प्रफुल्लित सर्व हो जाते सुखी।
शोक में लखि आप को हम सर्व हो जाते दुखी॥
हे प्रिये! तेरी मधुर वाणी सकल विधि सत्य है।
पै क्या करूँ, मेरा हृदय तो शोक में उन्मत्त है॥

(१६२)

जो होम उद्यापन करूँगा व्रत पालन कर चुका।
बाइस बरस आयु के इस कानन सघन में भर चुका॥
विषय-भोग-विहार-भोजन सर्व तृष्णा घट गई।
मातृ भूम्युद्धार-तृष्णा ये हृदय में सट गई॥

(१६३)

कहते हुये राणा मुखाकृति हो गई शोणित वरण ।
धिक्कार देते मानसिंह को कर पटक देते धरण ॥
अरे पामर ! कुछ तो करता लाज निज करतूति की ।
भगिनी यवन को व्याहि, समता कर रहा रजपूत की ॥

(१६४)

भगिनी दिया था यवन को तो प्राण दे देता वहीं ।
आर्य्यों को फिर तू अपने मुँह को दिखलाता नहीं ॥
फिर निलज्ज आया करन भोजन हमारे साथ में ।
छत्री कुमर हो लाद ली तू ने बेशर्म्मी माथ में ॥

(१६५)

दिल्ली में यवनों की शरण रहता तजे निज धाम को ।
मान हत हो क्यों धरा है मानसिंह निज नाम को ॥
स्पर्श यवनों के कभी भूले से हो जाते कहीं ।
आर्य्य जन इस देश के स्नान करते हैं वहीं ॥

(१६६)

हाय ! उन यवनों को भगिनी देन की स्वीकार है ।
ऐसे हिन्दू पोच को जीना महा धिक्कार है ॥
भगिनी सुता देने से किस को सम्पदा क्या मिल गई ।
और अपकीरति तुम्हारी आर्य्यों में खिल गई ॥

(१६७)

तू अकर्म्मी हो गया था जो किया था सो किया ।
धर्म्म तू ने नाश फिर औरों क क्यों करवा दिया ॥
तू लड़ाई जीत के दो चार मद में भर गया ।
परताप जीता है अभी, नहिं जान लेना मर गया ॥

(१६८)

तुझे था अभिमान राणा हम को नायें शीश को।
राणा झुकावें शीश इक उस ईश न्यायाधीश को॥
रहु रे! तेरे गर्व को मैंने जो नहिं चूरन किया।
जान लेना तो कोई भी कार्य्य नहिं पूरन किया॥

(१६९)

भगवान् राजा रामचन्द्र भी थे रहे बनवास में।
सीता शिरोमणि सी सती थीं धर्म्म पत्नी पास में॥
बनवास में श्रीराम की सेवा सिया ने ज्यों किया।
कोई त्रुटि रक्खी नहीं है प्रिये! तुम ने त्यों किया॥

(१७०)

इस लिये, प्यारी! मुझे कानन महा सुखदैन है।
है शोक हिन्दू म्लेच्छ के वश, और मुझ को चैन है॥
रत्न सिंहासन से बढ़ के शैल की चट्टान हैं।
खट मिट्ठ वन फल ये छप्पन भाँति के पकवान हैं॥

(१७१)

हे प्रिये! ये वन मुझे आनन्द ही का धाम है।
मेवाड़ में रहते यवन ये दुःख आठो याम है॥
आसन शिला तरु छाँह भीलों साथ में सुखवास है।
है महा सुख साज प्यारी धर्म्म मेरे पास है॥

(१७२)

हे प्राणपति! करना क्षमा मैं क्या लखूँ इस ज्ञान को।
हम औरतों का धर्म सेवें नित्य पति भगवान् को॥
सेवा करूँ मैं आप की मेरा यही सौभाग्य है।
स्त्रियों की ये तपस्या है यही वैराग्य है॥

(१७३)

प्यारी प्रशंसा क्या करूँ तेरा ये ज्ञान अनन्य है ।
तू सत्य पुत्री आर्य्य की है धन्य है ! तू धन्य है !!
हे मान तुमको ना खोटाई का अगर प्रतिफल दिया ।
वंश में तो क्षत्रियों के जन्म मैंने नहिं लिया ॥

(१७४)

प्राणपति ये कामनायें आप की होवें सुफल ।
नहिं हुई तो है मेरी दुर्भाग्य काही ये कुफल ॥
हे प्रिये ! दुर्भाग्य फल कहना तुम्हारा उचित है ।
आपकी वाणी पै ये दूजी गिरा अतिरिक्त है ॥

(१७५)

पाण्डवों की भाँति ईश्वर से भरोसा राखते ।
आते महाभारत में थे पारथ का रथ जो हाँकते ॥
महाभारत के विजय कर्त्ता विजय हित आइये ।
दीन की सुन दीन वाणी को प्रगट हो जाइये ॥

(१७६)

पाण्डव-सखा वसुदेव-सुत हा कृष्ण ! हा योगेश्वरे ।
उपदेश गीता के करैया वीर वचनों से भरे ॥
कहते हुये ऐसी गिरा हो कण्ठ गद् गद् रुक गया ।
चक्षुओं से अश्रुधारा बह चली बहु दुख भया ॥

(१७७)

वाह रे परताप ! तू सम कौन क्षत्री अन्य है ?
तू सत्य भारत पुत्र है तू धन्य है ! तू धन्य है !!
बाइस बरस परताप को कानन विचरते हो गया !
जन्म भू उद्धार पै अब तक नहीं उन से भया ॥

(१७८)

राणा की चिन्ता में सदा यवनेश भी रहता रहा ।
परताप कब आवें पकड़ मन में यही चाहता रहा ॥
एक दिन अकबर नें भारी क्रोध निज मन में किया ।
वीर गण सरदार अपने पास में बुलवा लिया ॥

(१७९)

सब से कहा कि प्रताप को जीता पकड़ जो लायगा ।
वह हमारी सल्तनत का अंश दशवाँ पायगा ॥
वीर सरदारों ने लाने की प्रतिज्ञा कर लिया ।
पै प्राण को अपने उन्हों ने हाथ ही पर धर लिया ॥

(१८०)

प्रतापसिंह की खोज में दिल्ली से योधा चल दिये ।
शस्त्र तीखे अश्व भी चञ्चल सबों ने ले लिये ॥
दल के दल धाये मुगल परतापसिंह की खोज में ।
आरा बल्ली शैल तिल तिल ढूँढते वन खोह में ॥

(१८१)

आरा बल्ली शैल ढूँढा सर्व ओराछोर को ।
ना पता पाया तो सब धाये हैं चारो ओर को ॥
ढूँढते ही ढूँढते वन जावरे के जा पड़े ।
भील दो विपता के मारे यवन सन्मुख आ पड़े ॥

(१८२)

मुगलों ने पकड़ा हाय ! उन भीलों को जाके वेग से ।
पूछते राणा कहाँ धमकी दिखाते तेग से ॥
राणा को बतलाये बिना जाने नहीं तुम पाओगे ।
इस हमारी तेग से तिल २ अभी कट जाओगे ॥

(१८३)

मुगलो, तुम्हारी तेग से तिल २ चहे कट जायँगे।
है स्वाँस जब लों हम नहीं महराज को बतलायँगे॥
निर्दयी मुगलों का मारा भील घायल भग गया।
दूसरा तेगों से उनकी टुकड़े टुकड़े कट गया॥

(१८४)

उन महा कष्टों से उन भीलों ने भय खाया नहीं।
प्राण अपने दे दिये राणा को बतलाया नहीं॥
धन्य स्वामी भक्त भीलो धन्य है इस ज्ञान को।
स्वामि-अर्पण कर दिया तुम ने जो अपने प्राण को॥

(१८५)

भागा हुआ वह भील घायल पास राणा के गया।
'स्वामी, यवन-दल आगये'—इतना कहा बस मर गया॥
भील की मृत्यू भई राणा के आँसू बह चले।
हा मित्र! मेरे हेतु तुम भी प्राण अपने दे चले॥

(१८६)

हा कर्म्म मेरे, इन विपिन में तुम दुसह दुख दे रहे।
मम हेतु इन दुखियों के काहे प्राण को तुम ले रहे॥
रचके चिता राणा ने प्यारे भील को अगनी दिया।
यवनों से लड़ने के लिये पर यत्न भी झटपट किया॥

(१८७)

ढूँढते ही खोजते तट में तुरुक दल आ गया।
परिवार-युत ये थे जहाँ चारो तरफ से छा गया॥
क्षत्रियों भीलों ने पै आगे नहीं बढ़ने दिया।
टूटे हुए शस्त्रों की है बौछार खुब उन पै किया॥

(१८८)

मैदान में इक तरु तले परताप का परिवार है।
चहुँ ओर से घेरे यवन हा ये विपत की मार है॥
बीच में परिवार कर चहुँ ओर से सब लड़ रहे।
यवनों के इन पर शस्त्र मानो मेघ ही से झड़ रहे॥

(१८९)

वीर ये ऐसे हैं जो ऐसे समय पर लड़ रहे।
रक्षा को इन की ईश ही मानो वहाँ पर कर रहे॥
'हर हर महेश' का शब्द कर यवनों को हैं ललकारते।
हैं तो ये थोड़े वीर पै साहस न अपना हारते॥

(१९०)

इक ओर चन्दावत डटे इक ओर राणा वीर हैं।
इक ओर राणा के कुमर जू अमरसिंह रणधीर हैं॥
उत्तर में सज्जन भीलगण झर झर चलाते तीर हैं।
पूरब में चन्दावत के बल से यवन भी अधीर हैं॥

(१९१)

दक्षिण में बालक अमरसिंह संग्राम डट कर कर रहे।
पश्चिम में राणा काल सम यवनों की जानें हर रहे॥
यवनों के दल के दल किये कुल बल जहाँ पर लड़ रहे।
देश प्रेमी आर्य्य थोड़े प्राण होमे अड़ रहे॥

(१९२)

राणा करों में खड्ग सन्सन् दामिनी सी चल रही।
वेग से यवनों के दल को वह खचाखच दल रही॥
निज रक्त से राणा नहाये हुए घायल अङ्ग हैं।
तिस की नहीं सुध पै यवन दल कर रहे वे भङ्ग हैं॥

(१६३)

वीर चन्द्रावत भी अतिशय वीरता से लड़ रहे ।
तलवार से जिनकी यवन सिर भूमि कट २ पड़ रहे ॥
घायल हैं पै कायर नहीं होते गरजते डाँटते ॥
ऊँखों का ऐसा खेत तुर्कों को सपासप काटते ॥

(१६४)

भीलों ने भी तीरों से यवनों को महा व्याकुल किया ।
जिसके लगा वह तीर वह क्षणमात्र भी फिर नहिं जिया ॥
यवन लोथों का लगा चहुँओर से अम्बार है ।
हो रहा संग्राम में अतिशय भयङ्कर मार है ॥

(१६५)

पै अमरसिंह पै यवन टूटे बहुत अति वेग से ।
करते हुये सब आक्रमण इक बार अपनी तेग से ॥
चन्द्रावत महाराणा, थे जिधर थे डट गये ।
उन दिशाओं के यवन प्रायः सभी थे कट गये ॥

(१६६)

दोनों दिशायें देखते ही साफ़ क्षण में हो गईं ।
जो मुगल बाकी रहे हिम्मतें उनकी खो गईं ॥
भागते, साथी को लड़ते देखते फिर लौटते ।
मांस को अपने वे अपने दाँत ही से नोचते ॥

(१६७)

अमरसिंह को जान बालक टूट सब उन पै पड़े ।
बालक तो थे ही पै वे अपने गात भर अच्छे लड़े ॥
फल कोई सतोषदायक देख पड़ता था नहीं ।
कम अवस्था दूसरे रण में निपुण वे थे नहीं ॥

(१९८)

चन्दावत वीर की सी वीरता नहिं कर सके।
अपने पिता की भाँति वे रण दक्षता नहिं कर सके॥
तिस पर भी यवनों के उन्हों ने हाथ पैर फुला दिये।
बहु यवन क्षण मात्रही में भूमि मध्य सुला दिये॥

(१९९)

अन्त में राणा के सुत विह्वल हुए पर लड़ रहे।
यवनों के सहसा आक्रमण से वीर रक्षा कर रहे॥
प्रताप चन्दावत दशा यह देखते निज ओर से।
यवनों के मारे नेक भी हटते नहीं इस ओर से॥

(२००)

ये हटें तो हौसले मन के यवन पूरे करें।
बालकों में, स्त्रियों में वेगही से पिल पड़ें॥
प्रतापसिंह ये सोचते हैं ठौर से टरते नहीं।
यवनों के धड़ से शीश को न्यारे उड़ करते वहीं॥

(२०१)

भुज बल शिथिल होने लगे हैं अमरसिंह बलवान के।
हैं खड़े तिन पै यवन बहु शस्त्र अपने तान के॥
थी सुता पृथ्वीराज की बैठे दशा यह लख रही।
मुख तमतमाया लाल हो क्रोधाग्नि हृदय दहक रही॥

(२०२)

वह वीर कन्या क्रोध कर होके खड़ी हुंकार के।
चण्डी सी धाई, वृक्ष से बरछे को वेग उखाड़ के॥
चिल्ला उठी रानी चली पुत्री कहाँ? पुत्री कहाँ?
पल मध्य में पहुँची यवन घेरे अमर को थे जहाँ॥

(२०३)

क्रोध कर बरछे से मारे चार तुर्की वेग से ।
घेरे अमर को थे खड़े जो निज नुकीली तेग से ॥
बोले अमरसिंह–हे लली, रण में वृथा तू आ गई !
बोली सुता हूँ क्षत्रियों की वीरताई छा गई ॥

(२०४)

कई एक यवनों को भवानी ने हतन क्षण में किया ।
नव सुन्दरी ने बाहु बल से उन्हें विस्मित कर दिया ॥
कहते यवन–अर्रे मियाँ लड़की यह कैसी वीर है ।
कैसी खचाखच काटती, दौड़ती मानिन्द तीर है ॥

(२०५)

क्या खूब काफ़िर कौम के लड़ते हैं लड़के लड़कियाँ ।
हो गये हैरत में हम तो देखते जी हाँ मियाँ ॥
वल्लाह, लड़का फेंकता देखो तो क्या शमशीर है ।
अर्रे यह काफ़िर कौम भर देखो निगा कर वीर है ॥

(२०६)

"अकबर की आधी फौज इन के पास हो जाती कहीं ।"
"जी चौथआई में ये हम को हिन्द में रखते नहीं ॥"
यह कह बहुत से मिल यवन किए कुँवरि पर आक्रमण ।
कण्ठ में तलवार खाई ईश कह आई शरण ॥

(२०७)

थोड़े यवन जब रह गए राणा की तीखी तेग से ।
राणा भी हत्थे ना लगे तब तुर्क भागे वेग से ॥
राणा ने ललकारा–अरे भागे कहाँ जाते हो खल ?
आए थे लेने को हमें सो ले चलो नहिं हो निबल ॥

(२०८)

सोचे यवन, जब थे बहुत काफ़िर न आया हाथ में।
अब पास इस के जाके क्या तलवार खायें माथ में॥
वाह रे राणा! तेरी रण-दक्षता यह धन्य है।
तू सा है चन्दावत यदी है और फिर नहिं अन्य है॥

(२०६)

जिस दम घुमाते खड्ग तुम सिर भरभरा गिरते धरण।
देखते तुम को यवन मन ठान लेते हैं मरण॥
परताप! रणविद्या यदी ऐसी नहीं तुम जानते।
तो यवन तुव धर्म्म का लोन्हें बिना नहिं मानते॥

(२१०)

इस भाँति जङ्गल में यवन घेरिन इन्हें बहु बार हैं।
निज मूड़ मारे भग गए हुए वृथा सब वार हैं॥
भागे यवन औ अमरसिंह ने दृष्टि जो पीछे किया।
हा! वीर कन्या भू पड़ी यह देखते दरका हिया॥

(२११)

लो मृत्यु आई थी हमारी शीश पै तुम ने लिया।
हा! अनूपम रूप को मम हेतु क्यों कटवा दिया॥
हे कुँवरि! तू ने हमें निज प्राण अर्पण कर दिया।
रक्षा हमारी के लिये पै पग नहीं पीछे किया॥

(२१२)

गोद में लिये हुए यह कह के चिल्लाने लगे।
राणादि चान्दावत वे क्षत्री भील सब आने लगे॥
राणा ने आते वेग ही गोदी में अपनी ले लिया।
पुत्री, हमारे साथ में तुम ने भी जीवन दे दिया॥

(२१३)

मैं नहीं था जानता तू देव कन्या साथ में।
जो जानता पद पूँज के तुझ को झुकाता माथ में॥
धीरे से बोली वीर माता धन्य मुझ को आज है।
यह देह आई है हमारी धर्म्म के जो काज है॥

(२१४)

रणक्षेत्र में वीराङ्गनाओं की तरह विश्राम है।
स्वर्ग में जाती हूँ तुम को हर्ष करना काम है॥
आप को माता पिता मेरे जो मिल जावें कहीं।
प्रार्थना मेरी भली विधि उन से कह देना सही॥

(२१५)

धन्य यह जीवन हमारा धन्य यह दिन आज है।
आप से धर्म्मभक्तों के मैं जो आई काज है॥
माता पिता भ्राता सरिस हो शोक नहिं तुम कीजिये।
हर्ष से हम को चिता पै सर्व मिल धर दीजिये॥

(२१६)

इस भाँति से समझाय के 'शिवशंभुहर' कहती भई।
देखते सब के क्षणक में बन्द आँखें हो गईं॥
प्रताप का परिवार सब रोने लगा चिक्कार के।
चारों तरफ से मच रहे हैं शब्द हाहाकार के॥

(२१७)

रानी मृतक तन गोद में ढह मार के रोने लगी।
कन्या की आनन्द मूर्ति मन में जागृत होने लगी॥
हे कुमारी चन्द्रवदनी रक्त माटी में सनी।
केश भीजे रक्त से हा लोटते हैं मेदनी॥

(२१८)

सुन्दर अधर वाणी मधुर बिहँसे बिना नहिं बोलती।
हा कमल नयनी सुता अब नैन क्यों नहिं खोलती॥
शस्त्र ते धाई थी पुत्री आज तू इन हाथ में।
हा! अभी बेधा था ये बरछा खलों के माथ में॥

(२१९)

हे सुता हम से सहस्त्रों ही गुणा तू थी भली।
चिरकाल को संसार में तैं यह सुयश तो कर चली॥
तव मात पितु अकबर के डर से साथ मेरे कर दिया।
हा! यहाँ भी आन तेरे प्राण यवनों ने लिया॥

(२२०)

पुत्री तेरे माता पिता को कौन मुख दिखलाऊँगा।
तव प्राण मेरे हित गये उनको यही समझाऊँगा॥
मैं जानता कानन में तू ऐसा महादुख पायगी।
मेरे कुमर के हित समर में प्राण तू दे जायगी॥

(२२१)

तो कदापि तुझे कभी मैं साथ में लाता नहीं।
शोक पै अति शोक तेरी मृत्यु का पाता नहीं॥
ईश्वर हमारे इस समय पै साक्षी हैं आपही।
इसकी सेवा में कभी त्रुटि एक नहिं हमसे रही॥

(२२२)

इस भाँति राणा रो रहे उत में चिता भी चुन गया।
अश्रु सबके बह चले अति शोक छा जाता भया॥
लोथ कन्या की उठा के वे चिता ढिग ले गये।
कन्या कुमर राणादि सब चिक्कार कर रोते भये॥

(२२३)

मित्र पृथ्वीराज तव पीछे सुयश यह कर रहा।
आप की प्यारी सुता को मैं चिता पर धर रहा॥
ज्यों धरा अग्नी चिता में ज्वाल धगती हुई।
क्षण मात्र ही में वीर कन्या राख जल के हो गई॥

(२२४)

हा नाथ! हा भगवान! जगदाधार! हा करुणामये!
आर्य्य दासों को प्रभू जी आप क्यों भूले भये?
ईश्वर हृदय में आपके क्या अब दया नहिं हर गई।
सबके शिरोमणि थे कहाँ अब दुर्दशा ऐसी भई॥

(२२५)

धरना हमीं पर क्या तुम्हें आधीनता का भार है।
कुदशा दासों की करना ही तुम्हें स्वीकार है॥
भावे तुम्हें सो कीजिये हम भी नहीं हटने के हैं।
हम ईश्वर तेरे सिवा नहिं और को रटने के हैं॥

(२२६)

इस आर्त्तनाद विलाप से है गूँज जङ्गल भर उठा।
ईश्वर से करते प्रार्थना राणा गगन को कर उठा॥
हे वीर पुत्री आज मम कारण भई जर छार तैं।
मेरी विनय है आर्य्य कुल में ले अभी औतार तैं॥

(२२७)

कन्या तुम्हें रोता नहीं तव वीरता को रो रहा।
शोक यह तेरा नहीं तव वीरता का हो रहा॥
परताप जी ने भील से बरछा वही मँगवा लिया।
वीर कन्या के चिता में गाड़ बरछे को दिया॥

(२२८)

गाढ़ के बोले कभी शुभ दिन हमारे आयँगे।
स्मृत कुँवरि प्रतिमा यहाँ कंचन की हम बैठायँगे॥
सन्ताप शोक विलाप कर बैठे हैं निज स्थान में।
नाना तरह की कल्पना करते हैं निज २ ध्यान में॥

(२२९)

दश पाँच क्षत्रिय रह गये औ जूझ सब रण में गए।
हैं कुछ तो बाकी भील हैं सब सोच में बैठे भए॥
दिल्ली में पृथ्वीराज ने अपनी सुता का सुन मरण।
ये भी सुना राणा के सुत-हित जाय के जूझी है रण॥

(२३०)

दम्पति महा हर्षित हुए कहते सुता तू धन्य थी।
ऋषि वंश की धर्म्मानुसरणी तैं सुता सम्पन्न थी॥
भगवान् तेरी कीर्त्ति ये संसार में विख्यात हो॥
सब की सुताओं को सुता यह गुण तुम्हारा ज्ञात हो॥

(२३१)

इस भाँति पृथ्वीराज कन्या की प्रशंसा कर रहे।
बहु भाँति कह २ दम्पती आनन्द उर में भर रहे॥
आधीनता अकबर की राणा ने नहीं स्वीकार की।
नाना विपत्ती थीं विपिन की पर वे अङ्गीकार की॥

(२३२)

वन वन वे दिन दिन घूमते भोजन मिले या नहिं मिले।
इत उत पड़े रहते शिला आसन मिले या नहिं मिले॥
नाना दुसह दुःखों ने है परताप का पीछा किया।
पर मातृ भू निज देश के हित हर्ष से सब सह लिया॥

(२३३)

शोक मय राणा तहाँ फिर कुछ दिवस रहते हुए।
चान्दावत वीर से इक रोज यह कहते हुए॥
सरदार चन्दावत! यहाँ अब ठीक रहना है नहीं।
क्यों? जान यवनों ने लिया परताप रहते हैं यहीं॥

(२३४)

परिवार की रक्षा रही सो अन्त चलकर कीजिए।
दल के दल यवनों से क्यों नाहक लड़ाई लीजिए॥
महराज चलिए जहाँ होवे आप का सुविचार है।
स्वामि-आज्ञा दास को तो सर्वथा स्वीकार है॥

(२३५)

हा हा! कहाँ जाऊँ मैं ये मेवाड़ के गिरि छोड़ के।
ये गुहा रूपी भवन आनन्द वन चहुँ ओर के॥
हाय! गिरि गूहों में भी हम को नहीं स्थान है।
हाय रे! परिवार, तेरे हित दुखी यह प्रान है॥

(२३६)

मित्र भ्राताओं चलो मरु भूमि के उस पार में।
सिंधु नद के पास टापू एक है विस्तार में॥
है विताना ही समय कुछ दिन बितावेंगे वहाँ।
अब यवन उत्पात भी अति घोर करते हैं यहाँ॥

(२३७)

सरदार! आशाओं से अपनी मैं निराशा हो गया।
हो गया निश्चय मुझे कानन निवासा होगया॥
हाय! आशायें मेरी कर्पूर ही सी उड़ गईं।
मुग्ध की सी कल्पना सारी वृथा मेरी भईं॥

(२३८)

राज पूतों का किया सौभाग्य मैंने नष्ट है।
मेरी करणी से उन्हें सहने पड़ेंगे कष्ट है॥
महराज ! सुख सौभाग्य इक दिन फिर वही होजायँगे।
शशि भाल नेत्र विशाल जब मेवाड़ ओर घुमायँगे॥

(२३९)

महराज ! उर में आप घबराहट न इतनी कीजिये।
हो वीर ज्ञानी आप यह विश्वास उर में दीजिये॥
सिंधु नद टापू में रह कुछ अनुष्ठान करेंगे हम।
विधि और देखें क्या करे साहस नहीं छोड़ेंगे हम॥

(२४०)

परतापसिंह चलने लगे सब बालकों को साथ कर।
परिवार सब सँग हो लिया नयनों में आये नीर भर॥
कुछ दूर राणा चल दुखी हो देखने पीछे लगे।
मातृ भू को छोड़ते दुख और भी उर में जगे॥

(२४१)

छूटते हैं आज से मेवाड़ के पर्वत मेरे।
हो खड़े कहने लगे हे वीर चन्दावत मेरे॥
आज तो मेवाड़ को चढ़ि उच्च गिरि से देख लूँ।
अब तो हम से छूटती हैं मातृ भू को भेंट लूँ॥

(२४२)

यह कहके राणा शैल की चोटी के ऊपर चढ़ गए।
आँसू भरे दृग देख के चित्तौड़ को कहते भए॥
हे मातृ भूमी ! हो रहा हूँ सदा को तुझ से विदा।
पै देख ले मेरा हृदय है शोक में तेरे छिदा॥

(२४३)

अभिमान जीवन का हमारा आज पूरा हो गया।
हाय ! उन ऋषियों का अब सौभाग्य सारा खोगया॥
जीवित रहूँ देना दरश तुम भक्त अपना जान के।
हो पुनर्जन्म में बालका लोटूँ चरण में आन के॥

(२४४)

शैल से राणा उतर परिवार के ढिंग आ गये।
सिंधु नद की ओर सबको साथ ले चलते भये॥
बहु दूर आगे बढ़ गये नहिं वृक्ष नहिं छाया कहीं।
सूर्य्य के बहु तेज में कोसों में रेती तप रही॥

(२४५)

तपती हुई रेती में शिशुओं के चरण जाते जले।
तिलमिलाते बालके रोते हुए जाते चले॥
हा ! राज कुल के बालकों के हैं महा कोमल चरण।
ऊपर को तपते सूर्य्य हैं नीचे को है तपती धरण॥

(२४६)

बालकों को तो सबों ने गोदियों में ले लिया।
लिये छाया के निगा सब ओर रुक कर के किया॥
परताप के सन्मुख में एक मनुष्य दौड़ा आ रहा।
'हे स्वामि! हे मेवाड़ पति! भूपाल!' यह गोहरा रहा॥

(२४७)

वह शब्द सुन सब घूम के उस ओर को लखने लगे।
नाना तरह की कल्पना निज २ हृदय करने लगे॥
मनुष्य गोहराता हुआ परताप सन्मुख आ गया।
कर जोड़ के परताप के चरणों में शिर नाता भया॥

(२४८)

'हे प्रिय भीमाशाह !' कह राणा ने उर लिपटा लिया।
दृग वारि भर बोले हे प्रिय ! मेरा पता क्यों पा लिया॥
हे नाथ ! मम सौभाग्य ने मुझको मिला तुम से दिया।
हूँ वृद्ध मन्त्री, अन्त में स्वामी दरश तो पा लिया॥

(२४९)

जरठ भीमाशाह मन्त्री पै कृपा यह कीजिये।
यह द्रव्य स्वामी आप को लाया हूँ सो ले लीजिये॥
धन असंख्यों का मुझे क्यों आप मन्त्री दे रहे।
हे नाथ ! यह धन आप ही से तो सदा लेते रहे॥

(२५०)

मेवाड़ में जो सम्पदा है आप की भूपाल है।
मन्त्री जी ! मैं लूँगा नहीं दीया हुआ यह माल है॥
मेवाड़ पति होता तो धन लेता तो था यह धर्म्म का।
मन्त्री ! यह धन लूँगा तो यह होगा मुझे आकर्म्म का॥

(२५१)

किन्तु आश्रम-हीन भिक्षुक दीन सा अब हो गया।
द्रव्य ले अब क्या करूँ होना रहा सो हो गया॥
लाये हुए परिवार को मरुभूमि पार में जा रहा।
मैं अदिन अपने सदाही हर्ष युक्त बिता रहा॥

(२५२)

हे मित्र ! भीमाशाह तुम इस द्रव्य को ले जाइये।
लूँ लगाय हृदय तुम्हें इक बार तो फिर आइये॥
राजन् ! रुलाओ नहिं हमें तुम दास अपना जानके।
इस द्रव्य को करिये ग्रहण महराज अपनी मान के॥

(२५३)

ऐसे समय यह द्रव्य स्वामी कार्य्य में नहिं आयगी।
तो जान पड़ता द्रव्य ये यवनेश के कर जायगी॥
चरणों पड़ूँ विनती करूँ मुझ पै कृपा यह कीजिये।
इस द्रव्य से अब आप राजन् कार्य्य अपने लीजिये॥

(२५४)

समझा हूँ मैं मेवाड़ के दुख से दुखी तुम हो गये!
इस हेतु लेके द्रव्य मेरे हेतु तुम आते भये॥
कुछ सोच के कहते भये अच्छा हमें स्वीकार है।
पै आप के धन पर हमारा कुछ नहीं अधिकार है॥

(२५५)

हाँ प्रभू! यह आपका सब नीति पूर्ण विचार है।
सब दशा में प्रजा धन पर भूप का अधिकार है॥
समझा सकूँ जो आप को मुझ में नहीं सामर्थ है।
स्वामी यह धन मेवाड़ के उद्धार ही के अर्थ है॥

(२५६)

लाया हूँ निज इच्छा से राजन्! प्रेम से ले लीजिये।
युक्तियाँ मेवाड़ के उद्धार की अब कीजिये॥
मन्त्री! तुम्हारी स्वामि भक्ती स्वामि भक्तन ज्ञात हो।
यह महा यश आप का संसार में विख्यात हो॥

(२५७)

मन्त्री! मनोरथ आप के पूरे करूँगा मैं सभी।
यह धन हमारे खर्च में कुछ भी न आवेगा कभी॥
वह युक्ति हो की दूर सहसा मातृ भू का भार हो।
भगवन् करें इस द्रव्य से मेवाड़ का उद्धार हो॥

(२५८)

आपही की द्रव्य से मुग़लों कभी हतमान हो।
आपही की द्रव्य से अब सिद्ध यह उत्थान हो॥
स्वर्णाक्षरों मेवाड़ के रक्षक लिखे जाओगे तुम।
चिरकाल को यशकारकों में नाम को पाओगे तुम॥

(२५६)

क्या सत्य ही मेवाड़ पर वह ईश तारस खागये।
क्या सत्य शिव दानी जु भीमाशाह बन कर आगये॥
परिवार युत जलता हुआ ईश्वर मुझे नहिं लखसके।
देख के दुख दास का कैलास में नहिं रह सके॥

(२६०)

प्रमाण क्या उस द्रव्य का क्या उससे कर सकते थे ये।
सेना सहस्र पच्चीस बारह वर्ष रख सकते थे ये॥
तो क्यों नहीं मेवाड़ का उद्धार अब हो जायगा।
दर्प मुग़लों का त्वरा अब दूर सब हो जायगा॥

(२६१)

उस धन से महाराणा ने थोड़े ही दिनों में क्या किया।
संग्राम की सामग्रियाँ इकठौर वेगहि कर लिया॥
तुर्कों ने यह जाना नहीं ऐसी चतुरताई किया।
सब क्षत्रियों ढिग आपने जासूस जन पहुँचा दिया॥

(२६२)

जिस दिवस को कह पठाया सब उसी दिन आ गये।
महा कानन मध्य क्षत्री टीड़ि दल सम छा गये॥
निश्चिन्त राणा राज्य में आनन्द तुर्की कर रहे।
यह जानते राणा कहीं जंगल में होंगे फिर रहे॥

(२६३)

अकबर ने कुछ बाकी नहीं रक्खा था राणा के लिये।
जो दुख महा संसार में वे सब थे राणा को दिये॥
यह जानता था की कहीं जङ्गल में वह मर जायगा।
मेरी शरण आये बिना वह चैन कैसे पायगा॥

(२६४)

शक्ति सिंह प्रताप के भाई कटक युत आगये।
सब वीर भी सजने लगे राणा की आज्ञा पागये॥
पैदल सवार तयार सब सरदार सैन सँवारते।
राणा की आज्ञा पा चले 'हर–हर महेश' पुकारते॥

(२६५)

मेवाड़ में कहते यवन आँधी सी यह क्या आ रही।
कहते हुए 'हर–हर' किसी काफ़िर की सैना आ रही॥
यवन कहते–"या खुदा! आफ़त अचानक आ गई।
ऐश करते थे मज़े में आज आफ़त आ गई॥"

(२६६)

क्षत्री असंख्यों वीर कर नङ्गी कृपानें तान के।
'महदेव हर हर' कर सकल मेवाड़ घेरा आन के॥
इक साथ मुगलों के हृदय में अतिघना भय छा गया।
देवीर के स्थान में दल क्षत्रियों का आ गया॥

(२६७)

सैन मुगलों की लिये शहबाज खाँ रहता जहाँ।
सब क्षत्रियों ने वेग से जा करके ललकारा वहाँ॥
एक दिन में ही सहस्रों ही यवन दल कट गये।
स्थान आमैतिक में अपने प्राण ले छिपते भये॥

(२६८)

प्रताप वीरों ने वहाँ भी प्राण उनके जा हरे।
इक इक को काटा खेद के थे क्रोध में क्षत्री भरे॥
काट यवनों को मिटाया क्षोभ जो चिरकाल के।
रक्त डूबी खड्ग ले आते हैं क्षत्री बालके॥

(२६९)

कमलमीर विजय किया, अरवी भी तरण में ले लिया।
जो यवन रहते वहाँ थे उचित दण्ड उन्हें दिया॥
सरदार अब्दुल्ला वहाँ था सैन युत मारा गया।
परताप के बल प्रबल से सब राज्य मिल जाता भया॥

(२७०)

अपने बत्तीसों किलों पर कर लिया अधिकार है।
इक वर्ष ही में वैसही फिर हो गया मेवाड़ है॥
सुन सुन खबर यवनेश यह कर मींज पछताते हुए।
प्रताप के कर्त्तव्य सुन के मन में भय खाते हुए॥

(२७१)

फिर लेन बदला मानसिंह महीप से राणा गये।
उसका खज़ाना लूट करके अपना भर लेते भये॥
फिर बाद तिसके वीर राणा ने उदयपुर भी लिया।
राजधानी नगर लघुबड़ किले बहु निज वश किया॥

(२७२)

विस्तार में परताप ने अपना किया अधिकार है।
चहुँ ओर क्षत्री कह रहे राणा कि जै जै कार है॥
प्रबल प्रतापी स्वामी राणा हो गये मेवाड़ के।
करते स्वतन्त्र स्वराज्य अपने शत्रुओं को मार के॥

(२७३)

हो गया राजस्थान का उद्धार इसी प्रकार से।
आर्य्य-वीरों की सुमति धर्मज्ञता सञ्चार से॥
फिर कभी मेवाड़ में आता न था यवनों क दल।
अब आर्य्यों की सुता निर्भय आवतीं बाहर निकल॥

(२७४)

नित युद्ध के उद्योग ही में चित रहा यवनेश का।
मर गया आशा में पै मेवाड़ को नहिं ले सका॥
मेवाड़ पति मेवाड़ के महराज फिर भी हो गये।
अकबर के मन के हौसिले नहिं एक भी पूरे हुये॥

(२७५)

विजयी हुए परताप तो भी क्षोभ उर का नहिं गया।
कहते हैं हा! चित्तौर का उद्धार हम से नहिं भया॥
पूर्व पुरुषों की हमारी कीर्त्ति वह चित्तौर है।
उद्धार ना उस का हुआ, यह घाव उर में और है॥

(२७६)

अपनी अवस्था शेष भी सुख से बिता पाये नहीं।
मेवाड़ पति का शान्त उर चण भर भी हो जाये नहीं॥
उदयपुर ऊँचे महल इक दिवस राणा चढ़ गये।
यह सोचते बाले पने से हम सिंहासन पै भये॥

(२७७)

अब लों मेरे सिर पर कितने काल चक्र घुमा गये।
पर जान पड़ता है मुझे स्वप्न सा है संसार ये॥
चित्तौर का भी शोक उन के उर में छा जाता भया।
अकुला उठा है प्राण थर थर अङ्ग कम्पित हो गया॥

(२७८)

मूर्च्छा आई अँधेरा आँखियों पर ढक गया ।
स्वप्न अद्भुत देखते बेहोश जब तन हो गया ॥
देवी अधिष्ठात्री प्रकट चित्तौर की सन्मुख हुई ॥
कहती हुई—सुत ! खोल दृग तव कामना पूरण हुई ॥

(२७९)

करता था जिस का ध्यान तू सन्मुख में तेरे आ गई ।
मत भय करे सुत ! खोल दृग इच्छा तेरी पूरी भई ॥
दुख मान मन इक भाँति से व्रत पूर्ण तेरा हो गया ।
चित्तौर मुगलों त्रास से उद्धार हो या नहिं भया ॥

(२८०)

हे पुत्र ! निज कर्त्तव्य को तुमने तो पालन कर लिया ।
वीरता की मूर्त्ति उर में क्षत्रियों के धर दिया ॥
पुत्र ! अब आयू तुम्हारी अधिक दिन की है नहीं ।
इस लिये कुछ व्यर्थ चिन्ता आप अब करिये नहीं ॥

(२८१)

आप की शुभ कीर्त्ति जो संसार उस को गायगा ।
यवनों के अत्याचार का कुछ क्षोभ भी मिट जायगा ॥
हे पुत्र ! स्वेत दीप से आवेगा भारी स्वेत दल ।
हिन्दू यवन इकता के तागे बाँध रक्खेगा अचल ॥

(२८२)

अन्त में भारत अधीश्वर भी वही हो जायँगे ।
सकल गुण सम्पन्न नाना सुख यहाँ उपजायँगे ॥
अज्ञान मुगलों भाँति तव मर्य्याद ना अवलोकि हैं ।
वे तव महत्त्व इतिहास स्पष्टाक्षरों में घोषि हैं ॥

(२८३)

राज्य उनकी अक्षय होगी चिरस्थायी होयगी ।
शक्ति उनकी देश के नाना दुखों को खोयगी ॥
वाणी भविष्यत भगवती की सत्य ही सब हो रही ।
है कृपा 'पञ्चम जार्ज किङ्ग' की प्रजा जागृत हो रही ॥

(२८४)

मूर्च्छा जगी राणा उठे धीरे से कुटी में गये ।
अन्तिम के दिन हैं आज भी कुश आसनी लेटे भये ॥
मन्त्री प्रधान प्रतिष्ठ जे सरदार वे बैठे हुए ।
सब मौन नाये शीश आँसू टपाटप गिरते हुए ॥

(२८५)

हैं विपिनसंघी भील भी चहुँ ओर से घेरे पड़े ।
औ पिता सन्मुख अमरसिंह भी हाथ जोरे हैं खड़े ॥
अन्य राजा लोग भी चहुँ ओर से बैठे हुए ।
राणा जी लरबर बैन से 'चित्तौर हा !' कहते हुए ॥

(२८६)

राणा कि सुन यह गिरा सरदारों क फट जाता हिया ।
सुत अमर को देख राणा स्वाँस इक लम्बी लिया ॥
वृद्ध चन्दावत जो प्रिय सरदार राणा के रहे ।
कर जोर कहते हे प्रभू ! इतने दुखी क्यों हो रहे ॥

(२८७)

योग महात्मा कि शान्ति में नाथ की बाधा न हो ।
हम सब खड़े सन्मुख, प्रभु की आज्ञा जो हो, वो हो ॥
धीरे से राणा बोलते सरदार मैं अति हूँ दुखी ।
निर्विघ्नता से मृत्यु के दिन भी नहीं मैं हूँ सुखी ॥

(२८८)

व्रत का उद्यापन हमारे अमरसिंह कर सकेगा ?
हे पिता ! विश्वास करिये सुत अवश्य ही करेगा ॥
कहूँ धर्म्म को कर साक्षी चित्तौर के उद्धार बिन ।
राज्य सुख भोगूँ नहीं मैं एक दिन क्या एक छिन ॥

(२८९)

चित्तौड़ में जब लों नहीं अधिकार मेरा होयगा ।
जो पिता का भेष है वह भेष मेरा होयगा ॥
तृण सेज करिहौं शयन मैं शय्या कभी सोऊँ नहीं ।
वस्त्रावरण का ठाठ भी जब लों कभी रक्खूँ नहीं ॥

(२९०)

राणा इशारा से अमरसिंह ने झुका शिर तट किया ।
आशीर्वाद दिया कुँवर के शीश पै कर धर दिया ॥
निश्चिन्त प्राणहिं त्यागि हों मेवाड़पति कहने लगे ।
विहँसि राणा मित्र चन्दावत को फिर लखने लगे ॥

(२९१)

राणा का विहँसन अर्थ है सो समझ चन्दावत गये ।
दृग अश्रुधारा बह चली कर जोड़ कर कहते भये ॥
हे नाथ ! इस बूढ़े के जीवित भी यह हो सकता कहीं ।
आप के व्रत को अमरसिंह लाँघ सकता है नहीं ॥

(२९२)

कुमर जी को आँखियों के सामने रक्खूँगा मैं ।
महाराणा मुख अनूपम हास्य दर्शी उस समैं ॥
तेजवान् स्वदेश प्रेमी मोह माया तज दिया ।
हा ईश ! हा शिव शिव कहा ! बस बंद आंखें कर लिया ॥

(२६३)

कहते शङ्कर शरण प्रभू ! यह ऋषी बाटिका हरी रहे ।
वीरत्व और विद्या, इन दो फल फूलों से अति फरी रहे ॥
हो हम में वह मेल, हमारी धर्म्म पताका खड़ी रहे ।
शान्ति २ शुभ शान्ति २ शुभ शान्ति यहाँ हर घड़ी रहे ॥

इति शुभम्

* ब्रह्मचर्य *

हम ब्रह्मचर्य से हुए हीन ।
बल गया बुद्धि हो गई छीन ॥
अब डील डौल रह गया छोट ।
तब कहते हैं कलियुगहिं खोंट ॥
निज कर्मन को नहिं दोष देत ।
कल्पित कलि की झट आड़ लेत ॥
अति विषय-वासना बसी अंग ।
नित्य प्रति करते वीर्य भंग ॥
तन तेज कहाँ से प्रकट होय ।
सब तेज-शक्ति नित रहे खोय ॥
बिन-वीर्य ज्ञान नहिं रमत भाल ।
बिन वीर्य होत नहिं तन विशाल ॥

वेरत हैं नाना रोग आन।
जिनसे होती है आयु हान॥
संतति प्रकटत है रोग-सहित।
अति लघु सुंदरता तेज-रहित॥
विन वीर्य नहीं वल होत अंग।
विन वल अरि-मद नहिं होत भंग॥
पूर्वजाचरण सब गए भूल।
व्यापित हैं जिससे विविध शूल॥
सुत अबहिं मातु-पय पान करत।
माता तेहि सुत अनुमान करत॥
बालेपन में कर देत व्याह।
विकलत वलबुधि हो जात दाह॥
जहँ हुए भीष्म अरु हनूमान—
से बालब्रह्मचारी महान॥
जिनका वल अजहूँ जगत्ख्यात।
जिनके चरित्र हैं सबहिं ज्ञात॥
उन वीरगणों के कथा प्रमाण।
हैं राममूर्ति जग-वर्तमान॥
औ रजपूतिन तारा बाई।
जिसकी सुकीर्ति देखो छाई॥
यह ब्रह्मचर्य का है प्रताप।
जो ब्रह्मचर्य हैं तजे आप॥
अब ब्रह्मचर्य पालो हमेश।
तो रहें नहीं तट रोग क्लेश॥
उपजे तब मेधा में सुज्ञान।
अरु विज्ञ जन में मिले मान॥

यह जानि करहु तुम प्रण सुजान ।
अब ब्रह्मचर्य नहिं होय हान ॥
'शंकर' तन मन चहु नित नवीन ।
तो ब्रह्मचर्य रखु निज अधीन ॥

* भजन *

टेक—ईश्वर भारत ओर निहारो !

तीस कोटि निर्बल भेंड़िन को तुमरो सदा सहारो ।
इन असाध्य आलसी जनन को देत आपही चारो ॥ ई० ॥
सम्पति शक्ति बुद्धि बल सबने कीन किनारो ।
अब यह दीन मलीन दुःखमय करते सदा गुजारो ॥ ई० ॥
नभ की ओर निरखि आपहिं ! इन दीन गिरा उच्चारो ।
नैनन नीर बहाय रहे सब इनको वेगि उबारो ॥ ई० ॥
जीवन का सुख देहु इन्हें अब नाम दयालु तुम्हारो ।
रंकन को तुम राव बनायो छत्र शीश पर धारो ॥ ई० ॥
इन से क्यों रूठे जगवंदन ! पशु गति जो संचारो ।
'शङ्कर शरण' दीनन पति ! अब अपराध बिसारो ॥ ई० ॥